भारतीय संविधान एवं भारतीय राजव्यवस्था (भाग 1)

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष: 011-47532596, 8750187501

Web: www.drishtiias.com
E-mail : drishtiacademy@gmail.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

इकाई- 1

राज्यव्यवस्थाः एक परिचय

1.1

राज्य, राज्य के तत्व तथा राजनीतिक व्यवस्था की आवश्यकता *(State, Elements of state and the need of political system)*

भारतीय राजव्यवस्था को समझने से पहले ज़रूरी है कि राजव्यवस्था (Polity) की कुछ मूलभूत अवधारणाओं तथा पारिभाषिक शब्दावली (Terminology) से आप परिचित हों। ऐसी कुछ महत्त्वपूर्ण अवधारणाएँ तथा उनकी व्याख्या आगे दी गई है।

राज्य क्या है? *(What is State?)*

राजव्यवस्था से जुड़ी सबसे प्राथमिक अवधारणा 'राज्य' (State) है। राज्य शब्द का प्रयोग यूँ तो विभिन्न प्रान्तों (Provinces), जैसे उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु आदि को सूचित करने के लिये भी होता है, किन्तु इसका वास्तविक अर्थ किसी प्रान्त से न होकर किसी समाज की **'राजनीतिक संरचना' (Political Structure)** से होता है। वस्तुतः यह एक **अमूर्त (Abstract) अवधारणा** है अर्थात् इसे बौद्धिक स्तर पर समझा तो जा सकता है, किंतु देखा नहीं जा सकता। उदाहरण के लिये भारत की सरकार, संसद, न्यायपालिका, राज्यों की सरकारें, नौकरशाही से जुड़े सभी अधिकारी इत्यादि की समग्र संरचना ही राज्य कहलाती है। किसी समाज के विकसित व सक्षम होने की पहचान इस बात से भी होती है कि वह एक स्वतंत्र राज्य के रूप में विकसित हो सका है या नहीं? विश्व के अधिकांश विकसित देशों में एक स्थिर राजनीतिक प्रणाली का दिखाई देना (जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैड, ऑस्ट्रेलिया में) और स्थिर राजनीतिक प्रणाली से वंचित देशों (जैसे कुछ समय पहले के अफगानिस्तान) में विकास प्रक्रिया का अवरुद्ध हो जाना इसी बात का प्रमाण है।

राज्य के तत्व *(Elements of State)*

किसी भी राज्य के होने की शर्त है कि उसमें चार तत्व विद्यमान हों-

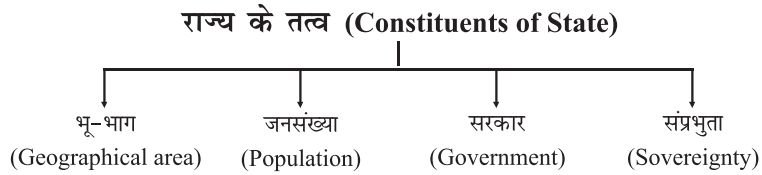

(क) **भू-भाग (Geographical Area):** अर्थात् एक ऐसा निश्चित भौगोलिक प्रदेश होना चाहिये जिस पर उस 'राज्य' की सरकार अपनी राजनीतिक क्रियाएँ करती हो। उदाहरण के लिये, भारत का सम्पूर्ण क्षेत्रफल भारत राज्य का भौगोलिक आधार या भू-भाग है।

(ख) **जनसंख्या (Population):** राज्य होने की शर्त है कि उसके भू-भाग पर निवास करने वाला एक ऐसा जनसमुदाय होना चाहिये जो राजनीतिक व्यवस्था के अनुसार संचालित होता हो। यदि जनसंख्या ही नहीं होगी तो राज्य का अस्तित्व निरर्थक हो जाएगा।

(ग) **सरकार (Government):** सरकार एक या एक से अधिक व्यक्तियों का वह समूह है जो व्यावहारिक स्तर पर राजनीतिक शक्ति का प्रयोग करता है। 'राज्य' (State) और 'सरकार' (Government) में यही अंतर है कि राज्य एक अमूर्त संरचना (Abstract structure) है जबकि सरकार उसकी मूर्त (Concrete) व व्यावहारिक अभिव्यक्ति।

(घ) **संप्रभुता या प्रभुसत्ता (Sovereignty):** यह राज्य का अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है। इसका अर्थ है कि राज्य के पास अर्थात् उसकी सरकार के पास अपने भू-भाग और जनसंख्या की सीमाओं के भीतर कोई भी निर्णय करने की पूरी शक्ति होनी चाहिये तथा उसे किसी भी बाहरी और भीतरी दबाव में निर्णय करने के लिये बाध्य नहीं होना चाहिये।

राज्य के ये चारों तत्व अनिवार्य हैं, वैकल्पिक नहीं। यदि इनमें से एक भी अनुपस्थित हो तो राज्य की अवधारणा निरर्थक हो जाती है। इसे कुछ उदाहरणों की सहायता से ज़्यादा बेहतर तरीके से समझा जा सकता है–

1. कभी-कभी ऐसा होता है कि सरकार भी होती है और जनता भी, किन्तु भू-भाग नहीं होता। उदाहरण के लिये, तिब्बत की सरकार का संकट यही है। चीनी आक्रमण के कारण जब 'दलाई लामा' को भारत की शरण लेनी पड़ी और वे हिमाचल प्रदेश के 'धर्मशाला' नामक स्थान से तिब्बत की निर्वासित सरकार का संचालन करने लगे तो एक विचित्र सी स्थिति उत्पन्न हो गई, क्योंकि तिब्बत की सरकार और कुछ जनता तो यहाँ थी किन्तु उनके पास न तो अपना भू-भाग था और न ही अपने मूल भू-भाग के संबंध में स्वतंत्र निर्णय करने की ताकत या प्रभुसत्ता।
2. कभी-कभी ऐसा भी हो सकता है कि सरकार भी हो, जनता भी हो, भू-भाग भी हो किन्तु संप्रभुता की कमी के कारण राज्य की धारणा पूरी न हो सके। उदाहरण के लिये, पराधीन भारत में जब वॉयसराय भारतीय भू-भाग का सर्वोच्च प्रशासक होता था तो एक निश्चित भू-भाग के भीतर जनता उसकी आज्ञाओं का पालन करती थी। किन्तु, तब भी वह संप्रभु नहीं था क्योंकि वह ब्रिटेन की सरकार के आदेशों के तहत कार्य करता था।
3. जब किसी देश में अराजक स्थितियाँ पैदा हो जाती हैं तो भी राज्य का ढाँचा चरमराने लगता है। उदाहरण के लिये, अफगानिस्तान में लम्बे समय तक कई गुटों में झगड़ा चलता रहा और अलग-अलग गुट देश के अलग-अलग हिस्से पर कब्जा जमाने में सफल होते रहे। ऐसी स्थिति में सरकार की शक्तियाँ व्यावहारिक स्तर पर शून्य हो जाती हैं, इसलिये उसकी संप्रभुता पर प्रश्नचिह्न लग जाता है।

राजनीतिक व्यवस्था की आवश्यकता क्यों पड़ती है?
(Why is political system required?)

एक स्वाभाविक प्रश्न यह भी उठता है कि क्या मानव समाज को उचित तरीके से रहने के लिये सचमुच राजनीतिक व्यवस्था की ज़रूरत है या नहीं? और यदि हाँ, तो क्यों?

कुछ लोग मानते हैं कि मनुष्य को राजनीतिक व्यवस्था की ज़रूरत है ही नहीं। राजनीतिक व्यवस्था तो मनुष्य के इतिहास की गलतियों का एक परिणाम है। यदि सारे मनुष्य समझदारी और पारस्परिक विश्वास से काम करें तो राजनीतिक व्यवस्था की ज़रूरत अपने आप खत्म हो जाती है। ऐसा मानने वालों में कार्ल मार्क्स तथा अन्य मार्क्सवादी विचारक तो थे ही; स्वयं महात्मा गांधी भी मानते थे कि जब समाज के प्रत्येक सदस्य को 'आत्मिक उन्नति' का पर्याप्त अवसर मिलेगा तो राजनीतिक व्यवस्था की ज़रूरत नहीं रहेगी।

किन्तु, कुछेक लोगों की राय छोड़ दें तो अधिकांश विचारकों की सोच यही है कि राज्य का अस्तित्व मनुष्य के लिये ज़रूरी होता है। इसकी प्रमुख वजह यही मानी गई है कि मनुष्य चाहे जितना भी विवेकशील (Rational) प्राणी हो; वह कभी-कभी या आमतौर पर अपने स्वार्थ के अधीन होता है तथा दूसरे व्यक्तियों से उसके टकराव की स्थितियाँ बनती रहती हैं। राज्य का ढाँचा सभी मनुष्यों को एक निश्चित कानून व्यवस्था के दायरे में ले आता है ताकि अपनी मूल असुरक्षाओं से मुक्त होकर सभी एक सहज जीवन व्यतीत कर सकें। कई महान विचारकों ने तो यहाँ तक कहा है कि मनुष्य को सही

अर्थों में मनुष्य बनने का मौका तभी मिलता है जब वह राज्य की आज्ञाओं का पालन करता है। यदि राज्य और कानून नहीं होंगे तो समाज के ताकतवर लोग कमज़ोर लोगों पर शक्ति का दुरुपयोग करेंगे और कमज़ोर लोग हमेशा भय में रहेंगे, अपने व्यक्तित्व का सहज विकास नहीं कर सकेंगे। चूँकि राजनीतिक व्यवस्था के पास किसी भी व्यक्ति, समुदाय या संस्था से ज़्यादा ताकत होती है, इसलिये वह ऐसी सभी अनुचित शक्तियों पर नियंत्रण कर सकता है।

मानव समाज को सचमुच राजनीतिक व्यवस्था की आवश्यकता है, इसका एक प्रमाण बहुत स्पष्ट है। इतिहासकारों और मानवशास्त्रियों (Anthropologists) ने अभी तक प्राचीन से प्राचीन और सरल से सरल जितने भी समाजों का अध्ययन किया है, उन सभी में किसी न किसी रूप में राजनीतिक ढाँचे (Political structure) की उपस्थिति देखी गई है, चाहे वह ढाँचा राजतंत्र (Monarchy) का हो, लोकतंत्र (Democracy) का या तानाशाही (Dictatorship) का।

यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि आज के समय में राजनीतिक व्यवस्था की भूमिका काफी ज़्यादा बढ़ गई है। जनसंख्या की अधिकता के कारण अब यह बिल्कुल संभव नहीं रहा है कि लोग आपसी सहमति से ही काम चला लें। औपचारिक कानूनों के निर्माण और कानूनों को लेकर होने वाले विवादों की स्थिति में न्यायिक प्रक्रियाओं की ज़रूरत बहुत अधिक मात्रा में पड़ने लगी है। इतना ही नहीं, आज की राजनीतिक व्यवस्था सिर्फ कानून का पालन करवाने तक सीमित नहीं है, अब उसने **लोककल्याणकारी राज्य (Welfare state)** का रूप धारण कर लिया है और समाज के सभी वर्गों को स्वतंत्रता, समानता और न्याय उपलब्ध कराना अब उसकी ज़िम्मेदारी हो गई है।

जहाँ तक भारत में राजनीतिक प्रणाली का प्रश्न है, इसकी आवश्यकता को कई स्तरों पर महसूस किया जा सकता है, जैसे-

(क) भारत में **राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया (Nation building process)** अभी चल रही है जिसे राष्ट्र विरोधी ताकतें नुकसान पहुँचा सकती हैं। ऐसे खतरों से निपटने के लिये मजबूत राजनीतिक प्रणाली ज़रूरी है।

(ख) भारत की **आंतरिक सुरक्षा (Internal security)** के समक्ष अभी कई चुनौतियाँ हैं; जैसे- आतंकवाद (Terrorism), नक्सलवाद (Naxalism), अलगाववाद (Separatism) इत्यादि। इन चुनौतियों से हम तब तक नहीं निपट सकते जब तक हमारे पास राज्य का एक मजबूत ढाँचा न हो।

(ग) भारतीय राज्य एक **कल्याणकारी राज्य (Welfare state)** है और यह वंचित वर्गों (Deprived classes) को समानता की स्थिति में लाने के लिये गंभीर प्रयास करता है। आरक्षण (Reservation) तथा सामाजिक न्याय (Social justice) की अन्य नीतियाँ इसी उद्देश्य से लागू की जाती हैं। चूँकि भारतीय समाज का एक बहुत बड़ा हिस्सा (जैसे- स्त्रियाँ, बच्चे, पिछड़ी जातियाँ तथा अल्पसंख्यक समुदाय) भिन्न-भिन्न दृष्टियों से वंचन (Deprivation) का शिकार रहा है और उन्हें समाज की मुख्यधारा (Mainstream) में लाने के लिये ज़रूरी है कि सरकार की ओर से उन्हें विशेष सुविधाएँ दी जाएँ, इसलिये भी भारत के लिये एक सुगठित राजनीतिक संरचना ज़रूरी है।

(घ) भारत में विभिन्न **हित-समूह (Interest groups)** रहते हैं जिनके बीच अपने हितों को लेकर टकराव होना स्वाभाविक है। इन हितों में सामंजस्य करते हुए उचित कानूनों के निर्माण के लिये संसद (Parliament) की ज़रूरत है जबकि ऐसे विवादों का न्यायिक समाधान करने के लिये एक सशक्त और सुलझी हुई न्यायपालिका (Judiciary) भी ज़रूरी है।

(ड़) भारतीय समाज तीव्र **सामाजिक परिवर्तनों (Social changes)** के दौर से गुज़र रहा है जिसके कारण वंचित वर्ग (Deprived classes) अपने अधिकारों की मांग बुलंद कर रहे हैं। इससे समाज के वे तबके असहज हैं जो पुरानी व्यवस्था में लाभकारी स्थिति में थे। ये परिवर्तन स्वाभाविक तौर पर तनावों को जन्म देते हैं जो कभी-कभी दलितों तथा स्त्रियों के विरुद्ध होने वाले अत्याचारों के रूप में दिखाई पड़ते हैं। सामाजिक परिवर्तन (Social change) तथा आधुनिकीकरण (Modernisation) की इस प्रक्रिया को इन दबावों से बचाने के लिये तथा उसे सुचारू रूप से चलाने के लिये सशक्त राजनीतिक ढाँचे की ज़रूरत पड़ती है।

अभ्यास हेतु प्रश्न

1. राज्य के लिये अनिवार्य तत्व हैं–
   1. जनसंख्या
   2. सरकार
   3. संप्रभुता
   4. भू-भाग

   कूट:
   (a) 1, 2 और 3 (b) 1, 3 और 4
   (c) 1, 3 और 4 (d) 1, 2, 3 और 4

2. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए–
   1. राज्य के चारों तत्व वैकल्पिक रूप से अनिवार्य होते हैं।
   2. यदि चारों तत्वों में से एक भी अनुपस्थित हो तो राज्य की अवधारणा निरर्थक हो जाती है।

   उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?
   (a) केवल 1
   (b) केवल 2
   (c) 1 और 2 दोनों
   (d) न तो 1 और न ही 2

3. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए–
   1. संप्रभुता राज्य का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है।
   2. संप्रभुता राज्य की वह सार्वभौम शक्ति है जिससे वह किसी भी बाह्य अथवा आंतरिक निर्णयों को लेने के लिये स्वतंत्र है।

   उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?
   (a) केवल 1
   (b) केवल 2
   (c) 1 और 2 दोनों
   (d) न तो 1 और न ही 2

4. ब्रिटिश भारत में वायसराय का शासन वस्तुत: राज्य नहीं था–
   (a) निश्चित भू-भाग के अभाव के कारण
   (b) जनसंख्या के अभाव के कारण
   (c) सरकार के अभाव के कारण
   (d) संप्रभुता के अभाव के कारण

5. भारत में राजनीतिक प्रणाली की आवश्यकता के कारण हैं–
   1. भारत में राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया अभी चल रही है, जिसे राष्ट्र विरोधी ताकतें नुकसान पहुँचा सकती हैं।
   2. भारत की आंतरिक सुरक्षा के समक्ष कई चुनौतियाँ हैं।
   3. भारत एक कल्याणकारी राज्य (Welfare state) की भूमिका में है।
   4. भारतीय समाज तीव्र सामाजिक परिवर्तनों के दौर से गुज़र रहा है।

   उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?
   (a) केवल 3 और 4
   (b) 1, 3 और 4
   (c) 1, 2 और 3
   (d) उपरोक्त सभी

6. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए–
   1. राज्य से अभिप्राय किसी समाज की राजनीतिक संरचना (Political Structure) से है।
   2. राज्य एक अमूर्त (Abstract) अवधारणा है।
   3. सरकार, राज्य की मूर्त व व्यावहारिक अभिव्यक्ति है।

   उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?
   (a) 1 और 2 (b) 2 और 3
   (c) 1 और 3 (d) 1, 2 और 3

शासन के अंग *(Organs of Government)*

किसी भी सरकार या राजव्यवस्था के सामने मूलत: तीन चुनौतियाँ होती हैं- (क) कानून बनाने की चुनौती, (ख) कानूनों के अनुसार शासन कार्य का संचालन करने की चुनौती, तथा (ग) व्यक्तियों के आपसी विवादों या व्यक्ति और सरकार के विवादों के समाधान के लिये कानून-प्रणाली (Legal System) के अनुसार न्याय व्यवस्था (Justice System) संचालित करने की चुनौती। प्रत्येक शासन व्यवस्था में इन तीन मूल चुनौतियों के समाधान के लिये उपाय किये जाते हैं। जिन तीन व्यवस्थाओं के माध्यम से इन चुनौतियों का समाधान किया जाता है, उन्हें शासन के अंग कहते हैं। शासन के तीनों अंग निम्नलिखित हैं–

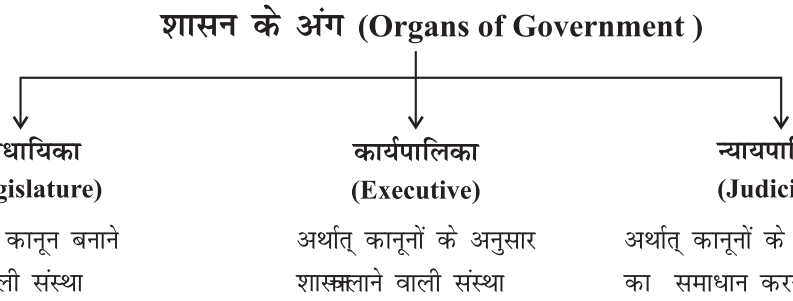

भारतीय राजव्यवस्था में औपचारिक प्रवेश करने से पूर्व बेहतर होगा कि आप इन तीनों अंगों तथा उनके कार्यों से भली-भाँति परिचित हों।

विधायिका *(Legislature)*

विधायिका का कार्य कानूनों का निर्माण करना है। राजतंत्रीय प्रणाली (Monarchical system) में यह कार्य आमतौर पर राजा के हाथ में होता था तथा राजा की इच्छाओं को ही कानून का दर्जा प्राप्त था। धर्मतंत्रीय शासन प्रणाली (Theocratic system) में धार्मिक ग्रन्थों को ही कानून तथा धर्म के सर्वोच्च पदाधिकारियों को कानूनों का अंतिम व्याख्याकार माना जाता था क्योंकि वे ही बताते थे कि कानून क्या है? यदि यूनान के प्राचीन नगर राज्यों के उदाहरण छोड़ दें तो आधुनिक काल से पूर्व मोटे तौर पर कानूनों का निर्माण इसी रीति से होता रहा।

आधुनिक काल में लोकतंत्र की स्थापना के बाद माना गया कि कानूनों का निर्माण जनता की इच्छाओं के अनुसार होना चाहिये। स्विट्ज़रलैण्ड जैसे कुछ देशों में कोशिश की जाती है कि जनता की इच्छाओं को सीधे तौर पर ही जान लिया जाये। इसके लिये वहाँ कुछ विशेष व्यवस्थाएँ प्रचलित हैं, जैसे-पहल (Initiative) तथा जनमतसंग्रह (Referendum)। किन्तु, सामान्यत: जनसंख्या तथा क्षेत्रफल की अधिकता के कारण व्यावहारिक तौर पर यह संभव नहीं होता कि सारी जनता की राय जानी जा सके। इसलिये, आजकल अधिकांश देशों में **प्रतिनिधि लोकतंत्र (Representative Democracy)** के माध्यम से विधायिका का गठन किया जाता है। इसके अंतर्गत, एक क्षेत्र विशेष का जनसमुदाय अपने एक प्रतिनिधि को चुनकर विधायिका या विधानमण्डल में भेजता है तथा सभी क्षेत्रों से चुनकर आये ऐसे प्रतिनिधि आपसी सहमति से कानूनों का निर्माण करते हैं। चूँकि ये सब प्रतिनिधि जनता द्वारा इसी उद्देश्य के लिये चुने जाते हैं, इसलिये मान लिया जाता है कि इनकी सहमति से निर्मित कानून वस्तुत: जनता की इच्छा के अनुसार ही बनाए गए हैं।

वर्तमान राजनीतिक व्यवस्थाओं में विधायिका आमतौर पर **दो सदनों (Two houses)** से मिलकर बनती है, जैसे भारत में लोकसभा और राज्यसभा। इनमें से एक सदन जनता द्वारा सीधे चुना जाता है और उसकी कानूनों के निर्माण में प्रमुख

भूमिका होती है। भारत में लोकसभा इसी भूमिका में है। दूसरे सदन की ज़रूरत मुख्यत: उन देशों में होती है जो संघात्मक ढाँचे (Federal Stucture) के अनुसार संगठित होते हैं। संघात्मक ढाँचे को सुरक्षित बनाए रखने के लिये इस दूसरे सदन में सभी राज्यों या प्रान्तों के कुछ सदस्यों को लिया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 'सीनेट' और भारत में 'राज्यसभा' की यही भूमिका है। चूँकि अधिकांश कानूनों के निर्माण के लिये इस सदन की भी सहमति आवश्यक होती है, इसलिये इस सदन की उपस्थिति से यह सुनिश्चित होता रहता है कि केन्द्र सरकार राज्यों की शक्तियों को छीन न ले। ध्यातव्य है कि ब्रिटेन की राजनीतिक व्यवस्था इसका एक महत्वपूर्ण अपवाद है। वहाँ की राजनीतिक प्रणाली एकात्मक (Unitary) है, इसलिये वस्तुत: वहाँ दूसरे सदन की ज़रूरत नहीं है। किन्तु, तब भी वहाँ लॉर्ड्स सभा (House of Lords) के रूप में दूसरा सदन रखा गया है, हालाँकि उसका मूल कार्य अपनी परंपराओं को सुरक्षित रखना तथा कुछ अतिविशिष्ट व गणमान्य लोगों को संसद में शामिल होने का मौका देना है, न कि प्रान्तों या स्थानीय इकाइयों के अधिकारों की रक्षा करना।

जहाँ तक **भारतीय विधायिका (Indian Legislature)** का प्रश्न है, यह संघात्मक ढाँचे (Federal Structure) पर आधारित है। केन्द्र और विभिन्न राज्यों की विधायिकाएँ संविधान में निर्दिष्ट अपने-अपने क्षेत्रों के लिये विधान बनाती हैं। केन्द्रीय विधायिका या संसद (Parliament) द्विसदनीय (Bicameral) है। प्रचलित भाषा में, इसके दो सदनों में से 'लोकसभा' को निचला सदन तथा 'राज्यसभा' को उच्च सदन कहते हैं (हालाँकि संविधान में इस शब्दावली का प्रयोग नहीं किया गया है)। 'राज्य-सभा' का गठन कुछ हद तक अमेरिकी सीनेट की तरह राज्यों को प्रतिनिधित्व देने के लिये है और कुछ हद तक ब्रिटेन के 'हाउस ऑफ लॉर्ड्स' की तरह गणमान्य नागरिकों को विधायिका का हिस्सा बनाने के लिये। राज्यों या प्रांतों की विधायिकाएँ आमतौर पर एकसदनीय (Unicameral) हैं। इस सदन को 'विधानसभा' कहते हैं। संविधान में व्यवस्था है कि यदि किसी राज्य विशेष में ज़रूरत महसूस की जाए तो दूसरे सदन के तौर पर 'विधान परिषद' की स्थापना की जा सकती है। विधायिका के एक अंग के रूप में भारतीय राष्ट्रपति संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित विधेयकों (Bills) पर अपनी सहमति प्रदान करता है।

कार्यपालिका *(Executive)*

शासन के दूसरे अंग को कार्यपालिका कहते हैं। इसका आशय उस व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह से है जो विधायिका द्वारा निर्मित कानूनों के अनुसार शासन चलाता है अर्थात् कानूनों को लागू करता है।

प्राचीन व्यवस्थाओं में विधायिका (Legislature) और कार्यपालिका (Executive) में कोई भेद नहीं था। उदाहरण के लिये, राजतन्त्र (Monarchy) में राजा विधायिका का प्रमुख भी होता था और कार्यपालिका का भी। इसी प्रकार, धर्मतंत्र (Theocracy) में धर्म का प्रमुख ही दोनों अंगों का सर्वोच्च अधिकारी होता था।

आधुनिक काल में जैसे-जैसे लोकतंत्र और संविधानवाद का विकास हुआ, कार्यपालिका की संरचना में परिवर्तन आने लगे। वर्तमान समय में कार्यपालिका के कई रूप दिखाई पड़ते हैं जो नीचे बने चित्र में देखकर समझे जा सकते हैं-

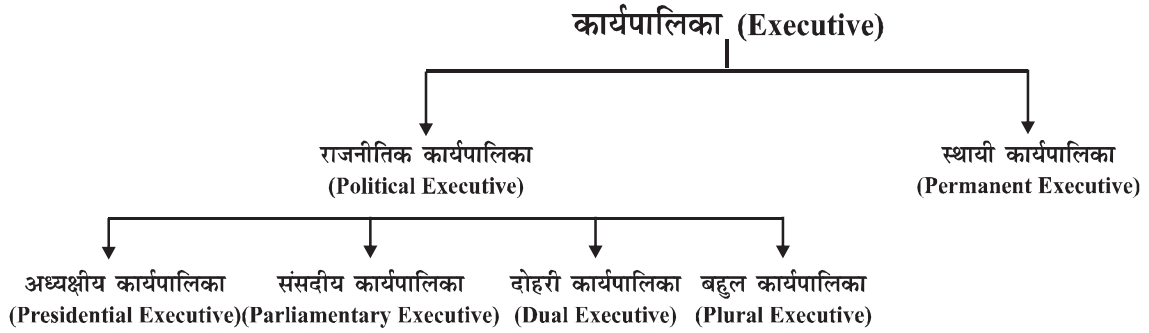

उपरोक्त चित्र द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण में कार्यपालिका के सबसे महत्वपूर्ण दो प्रकार हैं- (क) राजनीतिक कार्यपालिका (Political Executive) तथा (ख) स्थायी कार्यपालिका (Permanent Executive)।

राजनीतिक कार्यपालिका (Political Executive) कार्यपालिका के सर्वोच्च स्तर पर होती है जिसे जनता निश्चित अवधि के लिये प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से चुनती है। उदाहरण के लिये, भारत में केन्द्रीय मंत्रिमण्डल या अमेरिका में राष्ट्रपति इसी के उदाहरण हैं।

इसके विपरीत, **स्थायी कार्यपालिका (Permanent Executive)** में वे उच्च पदाधिकारी शामिल होते हैं जो अधिकारीतंत्र (Bureaucracy) के अंग होते हैं तथा जिनका कार्यकाल किसी तरह के निर्वाचन (Election) पर निर्भर नहीं होता। उदाहरण के लिये, भारत में भारतीय प्रशासनिक सेवा (Indian Administrative Service) तथा अन्य सिविल सेवाओं के अधिकारी इसी के उदाहरण हैं। स्थायी कार्यपालिका को राजनीतिक कार्यपालिका के निर्देशों के अनुरूप कार्य करना होता है। इसमें शामिल लोगों को प्रशासन के क्षेत्र में विशेष दक्षता हासिल होती है। इसलिये, जिन बिंदुओं पर राजनीतिक कार्यपालिका ऐसी दक्षता से वंचित होती है, वहाँ स्थायी कार्यपालिका के सदस्य उसकी सहायता करते हैं।

उपरोक्त चित्र से स्पष्ट है कि राजनीतिक कार्यपालिका (Political Executive) के भी कई रूप देखे जा सकते हैं, जैसे-

(क) अध्यक्षीय कार्यपालिका *(Presidential Executive)*

यह प्रणाली **अमेरिका** जैसे देशों में प्रचलित है जहाँ जनता एक निर्वाचकगण (Electoral College) के माध्यम से राजनीतिक कार्यपालिका के प्रमुख अर्थात् राष्ट्रपति का चयन करती है। राष्ट्रपति को कार्यपालिका के क्षेत्र में सभी शक्तियाँ प्राप्त होती है।

(ख) संसदीय कार्यपालिका *(Parliamentary Executive)*

यह प्रणाली **भारत और इंग्लैण्ड** जैसे देशों में प्रचलित है। इसके अंतर्गत विधायिका (Legislature) के सदस्यों में से ही राजनीतिक कार्यपालिका का चयन होता है। विधायिका में जिस दल के सदस्य बहुमत में होते हैं, वही दल अपनी सरकार बनाता है। सरकार चलाने वाले इसके सदस्यों के समूह को मंत्रिमण्डल कहा जाता है।

(ग) दोहरी कार्यपालिका *(Dual Executive)*

यह एक विशेष प्रणाली है जो **फ्राँस** जैसे कुछ देशों में दिखाई पड़ती है। इसके अंतर्गत कार्यपालिका की शक्तियाँ राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री में विभाजित होती हैं। ध्यातव्य है कि इसमें राष्ट्रपति का चुनाव अमेरिका की अध्यक्षीय प्रणाली के समान होता है जबकि प्रधानमंत्री का चयन ब्रिटिश या भारतीय संसदीय प्रणाली के समान होता है।

(घ) बहुल कार्यपालिका *(Plural Executive)*

यह एक विशिष्ट व्यवस्था है जिसका उदाहरण **स्विट्ज़रलैण्ड** जैसे कुछ ही देशों में देखा जा सकता है। इसके अंतर्गत राजनीतिक कार्यपालिका के सभी सदस्य बराबर शक्तियाँ रखते हैं, उनमें सर्वोच्च अधिकारी का पद सिर्फ औपचारिक या नाममात्र का होता है। उदाहरण के लिये, स्विट्ज़रलैण्ड की राजनीतिक कार्यपालिका में एक प्रमुख सहित कुल सात सदस्य होते हैं किन्तु इन सातों की शक्तियाँ बराबर होती हैं और प्रमुख के रूप में हर वर्ष इनकी नियुक्ति परिवर्तित होती रहती है।

जहाँ तक भारतीय कार्यपलिका **(Indian Executive)** का प्रश्न है, इसमें राजनीतिक कार्यपलिका (Political Executive) के स्तर पर ब्रिटेन की संसदीय प्रणाली जैसा ढाँचा स्वीकार किया गया है जिसके अनुसार लोकसभा में बहुमत प्राप्त दल मंत्रिमण्डल का गठन करता है। मंत्रिमण्डल सामूहिक उत्तरदायित्व (Collective Responsibility) के सिद्धांत के अनुसार कार्य करता है। राष्ट्रपति भारतीय कार्यपलिका का औपचारिक प्रधान (Formal head) है, किन्तु सामान्य स्थितियों में उसे मंत्रिमण्डल के निर्देशों के अनुसार ही काम करना होता है।

राजनीतिक कार्यपालिका (Political Executive) के अलावा, भारत में स्थायी कार्यपालिका (Permanent Executive) के रूप में एक सशक्त नौकरशाही या अधिकारीतंत्र (Bureaucracy) भी है। इसमें भारतीय प्रशासनिक सेवा (Indian

Administrative Service) जैसी अखिल भारतीय सेवाओं (All India Services) के अधिकारी भी शामिल हैं और भारतीय राजस्व सेवा (Indian Revenue Service) जैसी केंद्रीय सेवाओं (Central Services) के अधिकारी भी। राज्यों के स्तर पर उनकी अपनी लोक-सेवाएँ (Public Services) भी कार्य करती हैं।

न्यायपालिका *(Judiciary)*

शासन का तीसरा अंग न्यायपालिका (Judiciary) कहलाता है। न्यायपालिका के कई कार्य हैं। इसका प्रमुख कार्य यह है कि विधायिका द्वारा निर्मित कानूनों के अनुसार विभिन्न विवादों का समाधान करे। किंतु, आजकल न्यायपालिका की भूमिका काफी हद तक विधायिका के समान भी होने लगी है। इसका कारण यह है कि कई कानून इतने जटिल और अस्पष्ट होते हैं कि न्यायपालिका को उनकी मौलिक व्याख्या करनी पड़ती है। ये व्याख्याएँ स्वत: कानून का दर्जा प्राप्त कर लेती हैं जिन्हें न्यायाधीश-निर्मित-कानून (Judge Made Laws) या निर्णय-कानून (Case Laws) कहते हैं। वर्तमान समय में इन्हें कानूनों की एक पृथक् शाखा के रूप में महत्त्व दिया जाता है। ध्यातव्य है कि उच्च स्तर के न्यायालयों द्वारा दिये गए निर्णय निचली अदालतों के लिये पूर्वनिर्णय (Precedent) होते हैं तथा उनके लिये बाद के किसी भी समान मामले में उन पूर्वनिर्णयों (Precedents) को आधार बनाना ज़रूरी होता है।

न्यायपालिका की शक्तियाँ *(Powers of Judiciary)*

न्यायपालिका की शक्तियाँ इस आधार पर तय होती हैं कि शासन का स्वरूप कैसा है? साधारणत: एकात्मक (Unitary) शासन प्रणाली में न्यायपालिका कमज़ोर होती है तथा संसद की शक्ति बहुत अधिक होती है। ब्रिटेन की राजनीतिक प्रणाली इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। किन्तु, संघात्मक (Federal) प्रणालियों में न्यायपालिका की शक्ति हमेशा अधिक होती है। उन्हें केन्द्र और प्रान्तों के बीच उत्पन्न होने वाले वैधानिक विवादों का समुचित समाधान करने के लिये यह शक्ति दी जाती है कि वे केन्द्रीय विधायिका द्वारा निर्मित कुछ कानूनों को भी इस आधार पर अवैध घोषित कर दें कि वे संघात्मक प्रणाली या संविधान की मूल भावना के विरुद्ध हैं। अमेरिका और भारत के सर्वोच्च न्यायालयों को यह शक्ति प्राप्त है, इसलिये वे अत्यन्त ताकतवर हैं। जिन देशों में लिखित संविधान होता है, वहाँ संविधान का सटीक निर्वचन (Exact Interpretation) करने का दायित्व भी न्यायपालिका के पास होता है जिससे उसकी शक्ति और बढ़ जाती है। पुन: जिन देशों के संविधान नागरिकों को मूल अधिकारों की गारण्टी देते हैं, वहाँ न्यायपालिका मूल अधिकारों की संरक्षक होती है और न्यायिक पुनरीक्षण (Judicial Review) आदि की उसकी शक्ति बढ़ जाती है। इस संबंध में 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' (Procedure established by Law) तथा 'यथोचित विधि प्रक्रिया' (Due Process of Law) का विवाद बहुत रोचक है। इनमें से पहला सिद्धान्त संसद को न्यायपालिका से ताकतवर बनाता है (जैसे इंग्लैण्ड में), जबकि दूसरा सिद्धान्त न्यायपालिका को सर्वोच्चता प्रदान करता है (जैसे अमेरिका तथा भारत में)।

भारतीय न्यायपालिका (Indian Judiciary) अत्यंत शक्तिशाली है। भारतीय राजव्यवस्था का ढाँचा विधायिका और कार्यपालिका के स्तर पर भले ही संघात्मक (Federal) हो, न्यायपालिका के स्तर पर यह एकात्मक (Unitary) होने के नज़दीक है क्योंकि केन्द्र और राज्यों के स्तर पर भिन्न-भिन्न न्यायपालिकाएँ नहीं हैं। राज्यों के उच्च न्यायालय (High courts) सीधे तौर पर सर्वोच्च न्यायालय (Supreme court) के अधीन होते हैं। इसके अलावा, मूल अधिकारों के संरक्षक (Guardian of fundamental rights) के तौर पर तथा संविधान के निर्वचन (Interpretation) की अंतिम शक्ति रखने के कारण भारतीय न्यायपालिका काफी शक्तिशाली है। न्यायिक पुनरीक्षण (Judicial Review) का अधिकार उसे पहले भी प्राप्त था, अब उसकी व्याख्या संवधिान के आधारभूत लक्षणों (Basic structure of Constitution) के एक अंग के रूप में करके न्यायपालिका ने अपनी यह शक्ति और बढ़ा ली है।

कानूनों के विभिन्न प्रकार *(Different types of laws)*

न्यायपालिका के संबंध में यह जानना भी महत्त्वपूर्ण है कि कानूनों (Laws) के विभिन्न प्रकार कौन से हैं तथा किस राजनीतिक व्यवस्था में किस प्रकार के कानूनों को ज़्यादा महत्त्व दिया जाता है? कानूनों या विधियों (Laws) के कुछ प्रमुख प्रकार हैं–

कानून या विधि के प्रकार (Types of law)

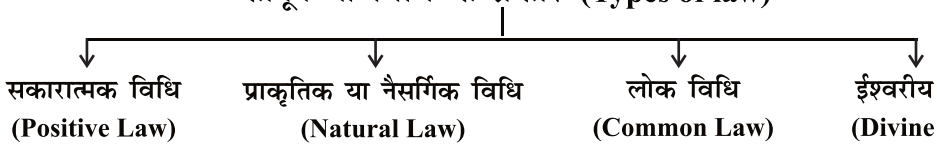

(क) सकारात्मक विधि (Positive Law) का अर्थ होता है- व्यक्तियों के एक निश्चित समूह द्वारा बनाया जाने वाला कानून। उदाहरण के लिये, वर्तमान में अधिकांश लोकतंत्रों में संसद द्वारा कानून बनाया जाना सकारात्मक विधि का ही प्रमाण है। ब्रिटेन जैसे देशों में सकारात्मक विधि (Positive law) को ही सर्वोच्च माना जाता है। इसीलिये, वहाँ न्यायपालिका की शक्तियाँ संसद की तुलना में अत्यन्त सीमित हैं।

(ख) प्राकृतिक विधि (Natural Law) का अर्थ है वे कानून जो स्वयं प्रकृति ने निर्मित किये हैं। इस कानून का प्रयोग आमतौर पर उन देशों में होता है जहाँ संविधान की सर्वोच्चता (Constitutional Supremacy) तथा न्यायपालिका की सर्वोच्चता (Judicial Supremacy) के सिद्धान्त लागू होते हैं। इसके तहत, यदि संसद द्वारा बनाया गया कानून प्रकृति द्वारा बनाये गए कानूनों या नागरिकों के मूल अधिकारों या नैतिक औचित्य (Moral appropriateness) के खिलाफ़ होता है तो न्यायालय उसे निरस्त कर देता है। उदाहरण के लिये, यदि कोई संसद व्यक्ति के साँस लेने के अधिकार को सीमित करना चाहे तो यह प्राकृतिक विधि के खिलाफ़ माना जाएगा क्योंकि प्रकृति ने सभी प्राणियों को साँस लेने की शक्ति और सुविधा प्रदान की है। इसी प्रकार, यदि संसद सदस्य पूर्ण बहुमत से अपने कार्यकाल को स्थायी बनाना चाहें तो भी सर्वोच्च न्यायालय इसे अवैध घोषित कर देगा क्योंकि यह नागरिकों के अपने प्रतिनिधियों को चुनने के अधिकार के खिलाफ़ है। अमेरिका और भारत के सर्वोच्च न्यायालय इसी सिद्धान्त के आधार पर संसद द्वारा निर्मित विधियों का न्यायिक पुनरीक्षण (Judicial Review) करते हैं।

(ग) लोक विधि (Common Law) का अर्थ उन कानूनों से है जो लम्बे समय से समाज में चली आ रही परंपराओं को ही कानून का रूप देने से निर्मित हुए हैं। जिन क्षेत्रों में संविधान मौन होता है, वहाँ आमतौर पर लोक विधि का ही सहारा लिया जाता है। परंपरावादी देशों में लोकविधि का महत्त्व काफी ज़्यादा होता है। उदाहरण के लिये, ब्रिटेन में आज भी लोकविधि को अत्यधिक महत्व दिया जाता है, विशेषत: वहाँ का कंज़र्वेटिव दल इन विधियों के पक्ष में रहता है।

(घ) ईश्वरीय विधि (Divine Law) का संबंध धर्मतंत्र (Theocracy) पर आधारित शासन प्रणालियों या उन देशों से है जहाँ किसी धार्मिक ग्रन्थ को ही संविधान की मान्यता दे दी गई हो। ऐसे देशों में ईश्वर के कथनों को ही कानून माना जाता है और उन्हें धर्मग्रन्थों के आधार पर निर्वचित (Interpret) किया जाता है। ऐसी व्यवस्थाओं में न्यायपालिका के सर्वोच्च स्तर पर धार्मिक संगठन या चर्च के प्रमुख लोग ही होते हैं। उन्हें अधिकार होता है कि जहाँ धार्मिक ग्रंथ मौन हों, वहाँ वे धर्म की मूल धारणाओं के अनुसार उचित व्याख्या दें।

भारत की विधि-व्यवस्था (Indian Legal system) उपरोक्त विधियों के समन्वय से निर्मित हुई है। यह मूलत: सकारात्मक विधि (Positive law) के सिद्धांत पर आधारित है क्योंकि संसद को कानून बनाने तथा संविधान को संशोधित करने की शक्ति हासिल है। किन्तु, न्यायपलिका को न्यायिक पुनरीक्षण (Judicial review) की शक्ति देकर यह प्राकृतिक विधि (Natural law) के तत्व को भी शामिल करती है। जिन क्षेत्रों में संसद ने विशेष कानून न बनाया हो या न्यायपालिका ने विशिष्ट निर्णय न दिया हो, वहाँ भारतीय विधि व्यवस्था लोकविधियों (Common laws) को भी महत्व देती है। ईश्वरीय विधियों (Divine laws) को सामान्यत: स्वीकार नहीं किया जाता है क्योंकि भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य (Secular state) है। तब भी, धर्म विशेष के आंतरिक धार्मिक मामलों में धार्मिक विधियों (Religious laws) को उस सीमा तक स्वीकार किया जाता है जहाँ तक वह नागरिकों के मूल अधिकारों (Fundamental rights) या कानूनी अधिकारों (Legal rights) का उल्लंघन न करती हो।

प्राकृतिक न्याय की धारणा *(Concept of Natural Justice)*

न्यायपालिका को संपूर्णता में समझने के लिये यह जानना भी ज़रूरी है कि **प्राकृतिक न्याय (Natural Justice)** का सिद्धान्त क्या है और यह आजकल इतना महत्त्वपूर्ण क्यों हो गया है? प्राचीन और मध्यकाल में राजा का न्याय निरंकुश

(Autocratic) किस्म का होता था अर्थात् उसे यह सिद्ध नहीं करना पड़ता था कि न्याय की प्रक्रिया वस्तुनिष्ठ (Objective) और पारदर्शी (Transparent) है। आधुनिक काल में व्यक्ति का महत्त्व बढ़ता गया है और अब न्याय-प्रणाली काफी पारदर्शी हो गई है। इस पारदर्शिता की अभिव्यक्ति प्राकृतिक न्याय (Natural justice) के सिद्धान्त में होती है।

प्राकृतिक न्याय (Natural justice) एक गतिशील अवधारणा (Dynamic concept) है अर्थात् इसका अर्थ पूर्णत: सुनिश्चित न होकर समय के साथ बदलता रहा है। मोटे तौर पर, इसके अंतर्गत निम्नलिखित सिद्धान्त स्वीकार किये जाते हैं–

(क) अभियुक्त (Accused) को निर्णय से पूर्व अपना पक्ष रखने का अवसर ज़रूर मिलना चाहिये।
(ख) न्यायाधीश को निर्णय सुनाने से पूर्व दोनों पक्षों को ध्यानपूर्वक सुनना चाहिये।
(ग) न्यायाधीश को निर्णय करने की प्रक्रिया में अपने व्यक्तिगत विचारों, आदर्शों तथा पूर्वाग्रहों (Prejudices) से तटस्थ रहना चाहिये।
(घ) निर्णय सुनाते समय सिर्फ निर्णय ही नहीं बताया जाना चाहिये बल्कि वे कारण भी स्पष्ट किये जाने चाहियें जिन्होंने न्यायाधीश को इस निर्णय तक पहुँचाया है।
(ङ) किसी भी व्यक्ति को स्वयं अपने खिलाफ़ गवाही देने के लिये बाध्य नहीं किया जाना चाहिये।

भारतीय न्यायपालिका (Indian Judiciary) ने **प्राकृतिक न्याय (Natural justice)** के सिद्धांत को पूरी तरह स्वीकार किया है। वह इस मूल सिद्धांत पर कार्य करती है कि *"हज़ार अपराधी भले छूट जाएँ, एक भी निरपराध को सज़ा नहीं मिलनी चाहिये।"* प्रत्येक अभियुक्त (Accused) को अदालत में अपना पक्ष रखने का मौका मिलता है, चाहे उसका कृत्य कितना भी घृणित हो या चाहे उसे सिद्ध करने के लिये कई गवाह मौजूद हों। इससे न्याय मिलने में थोड़ी देरी भले हो, राज्य का कुछ खर्च भी भले बढ़ जाए; प्राकृतिक न्याय (Natural justice) का सिद्धांत सही तरीके से लागू होता है। वर्तमान में मुंबई बम धमाकों के अभियुक्त मुहम्मद कसाब पर चलने वाला अत्यंत खर्चीला व अत्यधिक समय लेने वाला मुकदमा यह सिद्ध करने के लिये पर्याप्त है कि भारतीय राजव्यवस्था प्राकृतिक न्याय (Natural justice) के सिद्धांत को पूरी प्रतिबद्धता से स्वीकार करती है। भूतपूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी व राजीव गांधी के हत्यारों को अदालत द्वारा अपना पक्ष रखने का पूरा मौका दिया जाना भी इसी बात को प्रमाणित करता है।

न्यायिक सक्रियतावाद की धारणा *(Concept of Judicial Activism)*

वर्तमान समय में न्यायिक सक्रियतावाद (Judicial Activism) की चर्चा काफ़ी ज़्यादा होने लगी है। इसका अर्थ उस स्थिति से है जब न्यायपालिका आगे बढ़ चढ़कर काम करती है तथा विधायिका और कार्यपालिका के लिये निश्चित किये गए कार्यों में भी दखल देने लगती है। भारतीय राजव्यवस्था में पिछले 20-30 वर्षों में न्यायिक सक्रियतावाद के बहुत से उदाहरण देखने को मिलते हैं। जनहित याचिकाओं (Public Interest Litigations) को आधार बनाकर भारत के सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों ने कई अभूतपूर्व निर्णय दिये हैं। अनुच्छेद-21 की मौलिक व्याख्याएँ इसका सबसे बड़ा उदाहरण हैं। इसके अलावा, आजकल कुछ न्यायाधीश पर्यावरण-रक्षा के मुद्दे पर कई क्रांतिकारी महत्त्व के निर्णय दे रहे हैं। ऐसी न्याय-पीठों (Benches) को आजकल **'हरित-पीठें' (Green Benches)** कहा जाने लगा है।

शासन के तीनों अंगों में संबंध

(Ralation among the three organs of government)

किसी देश की राजव्यवस्था को समझने के लिये यह जानना भी ज़रूरी होता है कि वहाँ शासन के तीनों अंगों में कैसा संबंध है? मोटे तौर पर यह संबंध तीन प्रकार का हो सकता है–

1. कहीं-कहीं ये तीनों अंग परस्पर जुड़े होते हैं। उदाहरण के लिये, राजतंत्र (Monarchy) में राजा विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका तीनों का सर्वोच्च अधिकारी होता है। अधिनायकतंत्र/ तानाशाही (Dictatorship) तथा धर्मतंत्र (Theocracy) में भी ऐसी ही व्यवस्था देखी जाती है। यह लक्षण किसी राजव्यवस्था के पारंपरिक (Traditional) तथा गैर-लोकतांत्रिक (Non-democratic) होने की ओर इशारा करता है।

2. कुछ देशों में विधायिका और कार्यपालिका में नज़दीक का संबंध होता है जबकि न्यायपालिका इनसे अलग होती है। यह व्यवस्था संसदीय प्रणाली वाले देशों में दिखाई पड़ती है। इनमें कार्यपालिका, विधायिका का ही अंग होती है जबकि न्यायपालिका इन दोनों से पृथक् और स्वतंत्र होती है। भारत और ब्रिटेन को मोटे तौर पर इसके उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है।
3. अमेरिका जैसे देशों में यह संबंध कुछ अलग है। वहाँ ये तीनों अंग एक-दूसरे से पृथक् होते हैं। इसे **शक्तियों के पृथक्करण (Separation of Powers) का सिद्धान्त** कहते हैं। कार्यपालिका के प्रमुख अर्थात् राष्ट्रपति का चुनाव जनसाधारण द्वारा निर्वाचित निर्वाचक-गण (Electoral college) के माध्यम से होता है। विधायिका के दोनों सदनों का चुनाव जनता अलग तरीके से करती है। न्यायपालिका के पदाधिकारियों का चयन राष्ट्रपति करता है किन्तु इसके लिये उसे सीनेट के अनुसमर्थन (Ratification) की ज़रूरत पड़ती है। इस प्रकार, शासन के तीनों अंग एक-दूसरे की शक्तियों को मर्यादित करते हैं और इसके लिये संविधान में कई विशेष प्रावधान भी किये गए हैं। इस सिद्धान्त को **'नियंत्रण व संतुलन' (Checks and Balances)** का सिद्धान्त कहते हैं।

जहाँ तक **भारतीय राजनीतिक व्यवस्था (Indian Political System)** का प्रश्न है, इसमें शासन के तीनों अंगों का संबंध न तो पूरी तरह अमेरिका जैसा है और न ही इंग्लैंड जैसा। भारत में ब्रिटेन की तरह कार्यपालिका विधायिका के भीतर से ही बनती है क्योंकि भारत में संसदीय प्रणाली को अपनाया गया है। इसके बावजूद, भारतीय संसद ब्रिटिश संसद की तरह इतनी ताकतवर नहीं है कि उसके ऊपर सीमाएँ आरोपित न की जा सकें। भारतीय न्यायपालिका को अमेरिकी न्यायपालिका की तरह यह शक्ति प्राप्त है कि वह संसद द्वारा पारित कानून का न्यायिक पुनरीक्षण (Judicial Review) कर सके, और यदि वह कानून संविधान के मूल ढाँचे (Basic structure of constitution) के विरुद्ध है तो उसे खारिज कर सके। यह विशिष्ट संबंध भारत के संविधान निर्माताओं ने भारत की विशेष ज़रूरतों को ध्यान में रखकर बनाया था और अभी तक का अनुभव सिद्ध करता है कि उनका दृष्टिकोण उचित ही था।

अभ्यास हेतु प्रश्न

1. निम्नलिखित में से किस देश में प्रत्यक्ष लोकतंत्र का उदाहरण पाया जाता है।
   (a) अमेरिका (b) ब्रिटेन
   (c) भारत (d) स्विट्ज़रलैंड
2. निम्नलिखित में सरकार के अंग के रूप में जाने जाते हैं–
   1. न्यायपालिका 2. विधायिका
   3. कार्यपालिका

   कूट:
   (a) 1 और 2 (b) 2 और 3
   (c) 1 और 3 (d) 1, 2 और 3
3. निम्न में से किसे जनता निश्चित अवधि के लिये प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से चुनती है?
   (a) राजनीतिक कार्यपालिका
   (b) स्थायी कार्यपालिका
   (c) राजनीतिक व स्थायी कार्यपालिका दोनों
   (d) न तो राजनीतिक और न ही स्थायी कार्यपालिका
4. निम्नलिखित में से किस कार्यपालिका का चयन विधायिका (Legislature) के सदस्यों में से ही होता है?
   (a) अध्यक्षीय कार्यपालिका
   (b) संसदीय कार्यपालिका
   (c) दोहरी कार्यपालिका
   (d) उपरोक्त में से कोई नहीं
5. भारतीय शासन-प्रणाली का स्वरूप है–
   (a) अध्यक्षीय
   (b) संसदीय
   (c) अध्यक्षीय व संसदीय दोनों
   (d) उपरोक्त में से कोई नहीं
6. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए–
   1. भारत में मंत्रिमंडल सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत पर कार्य करता है।
   2. मंत्रिमंडल का सामूहिक उत्तरदायित्व लोकसभा के प्रति होता है।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

(a) केवल 1 (b) केवल 2

(c) 1 और 2 दोनों (d) न तो 1 और न ही 2

7. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए–

1. भारत की शासन व्यवस्था एकात्मक शासन प्रणाली का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।
2. एकात्मक शासन प्रणाली में न्यायपालिका हमेशा कमज़ोर होती है तथा संसद की शक्ति बहुत अधिक होती है।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

(a) केवल 1

(b) केवल 2

(c) 1 और 2 दोनों

(d) न तो 1 और न ही 2

8. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए–

1. भारत में एकीकृत न्यायिक व्यवस्था है।
2. भारत में केन्द्र और राज्य स्तर पर भिन्न-भिन्न व पृथक न्यायपालिकाएँ हैं।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

(a) केवल 1

(b) केवल 2

(c) 1 और 2 दोनों

(d) न तो 1 और न ही 2

9. भारत में संविधान के आधारभूत लक्षणों (Basic Structure of Constitution) का निर्धारणकर्ता है–

(a) संसद (b) न्यायालय

(c) राष्ट्रपति (d) मंत्रिमंडल

10. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए–

1. भारत की विधि-व्यवस्था मूलत: सकारात्मक विधि (Positive Law) के सिद्धांत पर आधारित है।
2. भारतीय शासन व्यवस्था में न्यायपालिका की न्यायिक पुनरीक्षण (Judicial review) की शक्ति प्राकृतिक विधि (Natural Law) के तत्व को शामिल करती है।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

(a) केवल 1

(b) केवल 2

(c) 1 और 2 दोनों

(d) न तो 1 और न ही 2

11. शक्तियों के पृथक्करण (Separation of powers) तथा नियंत्रण व संतुलन (Checks and Balances) का सिद्धांत मुख्यत: पाया जाता है–

(a) अमेरिकी शासन प्रणाली में

(b) भारतीय शासन प्रणाली में

(c) ब्रिटिश शासन प्रणाली में

(d) स्विट्ज़रलैंड की शासन प्रणाली में

12. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए–

1. भारत में ब्रिटेन की तरह कार्यपालिका विधायिका के भीतर से ही बनती है।
2. भारतीय न्यायपालिका को अमेरिकी न्यायपालिका की तरह न्यायिक पुनरीक्षण (Judicial review) की शक्ति प्राप्त है।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

(a) केवल 1

(b) केवल 2

(c) 1 और 2 दोनों

(d) न तो 1 और न ही 2

13. निम्नलिखित में से किस शासन प्रणाली में सत्ता की वैधता का स्रोत जनता स्वयं होती है?

(a) अभिजनतंत्र (b) धर्मतंत्र

(c) राजतंत्र (d) लोकतंत्र

14. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए–

1. भारत प्रतिनिधिमूलक लोकतंत्र (Representative Democracy) का उदाहरण है।
2. भारत में केन्द्रीय विधानमंडल दो सदनों से युक्त है।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

(a) केवल 1 (b) केवल 2

(c) 1 और 2 दोनों (d) न तो 1 और न ही 2